मौलिक सिद्धान्त – 1

अर्श अतिसार ग्रहणी का–प्रायः परस्पर हेतुत्व एवं तद्गत अग्निमांद्य का चिकित्सात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. आनन्द कुमार शुक्ला

निर्देशक : वैद्य सेवकराम विरक्त

सह निर्देशक : वैद्य रामबाबू द्विवेदी

1983 : 205

अर्श, अतिसार एवं ग्रहणी रोगों में परस्पर हेतुत्व एवं अग्निमांद्य का चिकित्सात्मक अध्ययन ही महानिबन्ध का उद्देश्य है।

इतिवृत्तानुसार ग्रहणी के 8, अर्श के 7, अतिसार के 11 रोगियों का चयन किया गया।

प्रयोगार्थ **पञ्चकोल** चूर्ण (भा.प्र.) 3.3 ग्राम प्रातः सायं भोजन मध्य में उष्ण जल से 21 दिन तक दिया गया।

73.3 प्रतिशत रोगियों में मन्दाग्नि, 26.7 प्रतिशत में विषमाग्नि लक्षण मिले। तीनों व्याधियों के अधिकांश रोगियों में प्रायः लक्षण सामान्यत्व पाया गया। पञ्चकोल चूर्ण प्रयोग से अतिसार के 7 रोगियों में मन्दाग्नि नष्ट हुई। अर्श के तीन रोगियों में व ग्रहणी के 6 रोगियों की मन्दाग्नि लक्षणों में लाभ प्रतीत होता है।

मौलिक सिद्धान्त – 2

ह्रास हेतुर्विशेषश्च–सिद्धान्त का प्रामाणिक अध्ययन

अध्येता : डा. योगेश्वर दयाल बंसल

निर्देशक : वैद्य सेवकराम विरक्त

सह निर्देशक : वैद्य ओम् प्रकाश उपाध्याय

1984 : 217

''ह्रास हेतुर्विशेषश्च'' की प्रायोगिक पुष्ट्यर्थ स्थौल्य रोग में ह्रास हेतु शिलाजतु का अग्निमंथ स्वरसानुपान से प्रयोगात्मक कार्मुकता का सत्यान्वेषण ही महानिबन्ध का उद्देश्य है ।

प्राकृत भार से अधिक विशेषतः नितम्ब, उदर, स्तन प्रदेश में मेदोवृद्धि को स्थौल्य का आधार माना गया।

शिलाजतु 500 मि.ग्रा. की 2 मात्रायें अग्निमंथ स्वरस 20 मि.लि. की 2 मात्राओं के साथ प्रातः सायं 21 रोगियों में 21 दिन तक दी गयी।

6 रोगियों को 75 प्रतिशत तक लाभ, 9 रोगियों को 50 प्रतिशत लाभ तथा 4 रोगियों में 25 प्रतिशत तक लाभ परिलक्षित हुआ। शेष दो रोगियों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ।

मौलिक सिद्धान्त – 3

अपतर्पणोत्थ व्याधि में सन्तर्पण (सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक अध्ययन)

अध्येता	:	डा. योगेन्द्र कुमार
निर्देशक	:	वैद्य सेवकराम विरक्त
सह निर्देशक	:	वैद्य रामबाबू द्विवेदी
1984	:	158

बहुसंख्यक अपतर्पणोत्थ व्याधियों में स्नेहन की कार्मुकता का प्रायोगिक अध्ययन ही महानिबन्ध का उद्देश्य है।

इतिवृत्तात्मक आधार पर अपतर्पण निमित्तज कार्श्य के 18 रोगियों का चयन किया गया।

अच्छ स्नेह प्रथम 5 दिन 20 ग्राम प्रतिदिन, 6 से 10 दिन तक 40 ग्राम, 11 से 20 दिन तक 50 ग्राम, इसके बाद अवरोही क्रम से 40वें दिन पुनः 20 ग्राम प्रतिदिन की मात्रा में कोष्ण जल या दुग्ध के साथ दिया गया।

10 आतुरों में भार, कान्ति, वक्ष, उदर, बाहु, जंघा एवं ऊरू के पूर्वमाप में उत्तम लाभ हुआ, 3 को मध्यम लाभ और 2 को कोई लाभ नहीं हुआ।

मौलिक सिद्धान्त – 4

धातवो हि धात्वाहाराः (च.सू. 28/3)

अध्येता : डा. बृजनन्दन गौतम

निर्देशक : वैद्य सेवकराम विरक्त

सह निर्देशक : वैद्य बनवारी लाल गौड़

1985 : 214

''धातवो की धात्वाहाराः'' सिद्धान्त की पुष्टि हेतु महानिबन्ध विषय चयनित किया गया।

इस सिद्धान्त की पुष्ट्यर्थ धातुपोषण क्रम का विश्लेषण के आधार पर एकीय मत की पुष्टि में शास्त्रीय संकलन जुटाये गये हैं।

निष्कर्ष यही है कि आद्य आहार रस से प्रारम्भ होकर क्रमिक धातु पुष्टि होती है। पूर्ववर्ती व उत्तरवर्ती धातुओं में वृद्धि क्षयात्मक प्रभाव होते हैं। एक धातु का क्षय होने पर दूसरे धातु उसके पूरण में सहायक होते हैं। प्रत्येक धातु की पुष्टि स्वाग्नि निमित्तज होती है।

मौलिक सिद्धान्त – 5

आयुर्वेदीय त्रिदोष सिद्धान्तान्तर्गत श्लेष्म विवेचन

अध्येता : डा. राजेश कुमार शर्मा

निर्देशक : वैद्य सेवकराम विरक्त

सह–निदेशक : वैद्य बनवारी लाल गौड़

1985 : 196

त्रिदोषों पर प्रभूत अध्ययन के बावजूद श्लेष्म दोष पर पुनर्गवेषणात्मक अध्ययन ही महानिबन्ध का उद्देश्य है।

विस्तृत सैद्धान्तिक संकलन तथा श्लेष्मल शरीरावयवों का प्रत्यक्षीकरण ही अध्ययन का आधार है।

श्लेष्मा शरीर में प्राकृत स्वरूप में दूध में अदृश्य किन्तु सत्यतः नवनीत के समान रहता है। तैजसाग्नि से पाक परिणाम को प्राप्त होकर प्रसादांश रूप में ओजोरूप धारण कर स्नेहांशों की पुष्टि, बल, दृढता आदि प्राकृत कर्म करता है।

मौलिक सिद्धान्त – 6

''न च सर्वाणि शरीराणि व्याधि क्षमत्वे समर्थानि भवन्ति'' (च.सू. 28/7) के परिप्रेक्ष्य में व्याधि क्षमत्व का आयुर्वेदीय विश्लेषण

अध्येता : डा. कमलेश कुमार शर्मा

निर्देशक : वैद्य सेवक राम विरक्त

सह–निर्देशक : वैद्य बनवारी लाल गौड़

1985 : 252

व्याधि क्षमत्व के स्पष्ट आयुर्वेदीय सिद्धान्त को व्याख्येय बनाना ही महानिबन्ध का उद्देश्य है।

अद्यावधि आयुर्वेदीय एवं आधुनिक व्याधि क्षमत्व विषयक संकलन ही अध्ययन का आधार है।

यद्यपि प्रायोगिक अध्ययन नहीं किया गया है तथापि–व्याधि क्षमत्व की आयुर्वेद रीति से विस्तृत व्याख्या की गई है और व्याधि क्षमत्वोत्पादक उपायों का निर्देश भी विस्तार से किया गया है।

मौलिक सिद्धान्त – 7

अग्नि विवेचन

अध्येता : डा. गोविन्दराम पयासी

निर्देशक : वैद्य सेवकराम विरक्त

सह–निदेशक : वैद्य रामबाबू द्विवेदी

1985 : 216

अग्निसंबोध का मौलिक सिद्धान्त दृष्ट्या विस्तृत उहापोह करना ही महानिबन्ध का उद्देश्य है।

50 आतुरों में विभिन्न रोगों में तथा 40 स्वस्थ व्यक्तियों में अग्नि विषयक विकृतियों का अध्ययन कर विश्लेषण किया गया।

जिनमें से स्वस्थ व्यक्तियों में समाग्नि 29 प्रतिशत में ही परिलक्षित हुई, शेष 40 प्रतिशत में विषमाग्नि, 31 प्रतिशत में मन्दाग्नि देखी गयी। तीक्ष्णाग्नि स्वस्थ व्यक्ति नहीं मिले।

रोगी वर्ग में श्वास रोगियों में सर्वाधिक अग्निमांद्य रहा, तदनन्तर उदर व ग्रहणी के रोगियों में विषमाग्नि अधिकतर देखी गयी।

मौलिक सिद्धान्त – 8

दोषों का धातु एवं मलों के साथ आश्रयाश्रयी भाव (सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक अध्ययन)

अध्येता : डा. गणेश पाण्डेय

निर्देशक : प्रो. मोहनलाल भारद्वाज

1986 : 185

दोषों, धातुओं एवं मलों का परस्पर आश्रयाश्रयी भाव का सैद्धान्तिक संकलन व प्रायोगिक प्रत्यक्षीकरण ही महानिबन्ध का उद्देश्य है।

प्रायोगिक अध्ययन के लिये वृद्ध, युवा एवं बालक जिनमें क्रमशः वात, पित्त, कफ के प्रकर्ष गुण लक्षण थे, ऐसे 2–2 व्यक्ति लिये गए। वात वृद्धिकर के रूप में जम्बू चूर्ण 1 से 3 ग्राम, जम्बू स्वरस 10–20 मि.लि. दिन में 3 बार दिया गया।

पित्त वृद्धिकर के रूप में सर्षप चूर्ण 2 से 4 ग्राम व कफ वृद्धिकर के रूप में घृत 2 तोला 2 बार दिया गया।

आहार एवं पथ्य भी प्रमुख रूप से दोष प्रकोपक ही रखे गए।

वात के दो वृद्ध रुग्णों में जम्बू चूर्ण सेवन के तीसरे दिन से ही वात प्रकोप के लक्षणों के साथ अस्थितोद् तथा पुरीष संग हो गया। पित्तज दो रुग्णों में दूसरे भोजनकाल में सर्षप चूर्ण से विदाह, रक्तगत व्यम्लता, अम्लोद्गार आदि लक्षण उत्पन्न हो गए। कफज रुग्णों में घृत से गौरव, आलस्य के साथ रक्त दुष्टि एवं मूत्रदुष्टि के लक्षण भी देखे गए।

मौलिक सिद्धान्त – 9

देहस्य रूधिरं मूलम्–एक प्रायोगिक अध्ययन

अध्येता	:	डा. सत्यपाल शर्मा
निर्देशक	:	प्रो. मोहनलाल भारद्वाज
1986	:	169

आयुर्वेद में रक्तक्षय की आत्ययिक अवस्था में रक्त की पूर्ति किस प्रकार आत्ययिक स्तर पर सम्भव है। इसका ज्ञान करना ही इस महानिबन्ध का प्रयोजन है।

रक्तक्षय के जीर्णकालिक तथा नवीन 20 रुग्णों का चयन कर श्वसनगति, रक्तचाप तथा रक्तस्त्राव की मात्रा के आधार पर तीव्रता का अंकन किया गया। इन रुग्णों में स्वस्थ अजारक्त (ताजा) में मधु, गोदुग्ध मिलाकर रक्त बस्ति के रूप में प्रयोग करवाया गया। बस्ति देने से पूर्व कोष्ठ शुद्धयर्थ अमलतास चूर्ण पूर्व रात्रि में दिया गया रक्तस्कंदन विरोधी द्रव्य के रूप में दर्भ स्वरस का प्रयोग किया गया।

कुल अधीत 20 में से 13 को उत्तम लाभ, एक को मध्यम व 5 को अल्प लाभ व एक को अलाभ रहा।

मौलिक सिद्धान्त – 10

शरीर का समयोगवाहित्व एक विवेचन

अध्येता : डा. विजय कुमार पारीक

निर्देशक : प्रो. मोहनलाल भारद्वाज

1986 : 221

शरीर एवं शरीर भावों का समयोग परक एवं विषमयोग परक सैद्धान्तिक अध्ययन ही इस महानिबन्ध का उद्देश्य है।

दोष, धातु, मल का आहार से धातु पोषण क्रम तथा साथ में हित, प्रकृति, रोग क्षमता व मन, ये सब शरीर रूपी कार्य को किस प्रकार संचालित करते हैं। इसका सैद्धान्तिक संकलन किया गया।

शरीर के समयोगवाहित्व के संदर्भ में ज्ञातव्य है कि कार्यकारण भाव में समयोग महत्वपूर्ण है व यही शरीर के अर्थ में स्वास्थ्य कहलाता है, जिसे बनाये रखने के लिए दोष, धातु, मल का कोषा की इकाई तथा स्व–स्व नियत कर्म समयोग एवं सहकार रखना पड़ता है।

मौलिक सिद्धान्त – 11

मानव प्रकृति परीक्षणात्मक अध्ययन (वातलाद्याः सदातुरा के परिप्रेक्ष्य में)

अध्येता : डा. विजय शंकर पाण्डे

निर्देशक : प्रो. मदनगोपाल शर्मा

1987 : 198

स्वस्थ एवं आतुर की प्रकृति का परीक्षणात्मक अध्ययन करके विश्लेषण निर्वचन आदि सांख्यकीय विधियों से किया जाना इस अध्ययन का उद्देश्य है।

प्रकृति परीक्षण हेतु शास्त्रोक्त प्रकृति लक्षणों को संकलित कर चार्ट बनाया गया लक्षणों को रोगी में षड्विध परीक्षा के आधार पर जानकर अंकन किया गया। जिस दोष के लक्षणों की अधिकता पाई गई उसे तत्तद् दोष प्रकृति वाला माना गया। समान लक्षण पर दोनों द्विदोषज या त्रिदोषज परिणाम अंकित किया गया।

शास्त्र निर्दिष्ट वातलाद्याः सदातुरा के अनुसार वातल शत प्रतिशत सदातुर, पित्तल 80 प्रतिशत एवं श्लेष्मल प्रकृति के रोगियों में से 70 प्रतिशत सदातुर पाए गए।

मौलिक सिद्धान्त – 12

त्रिदोष एवं नाड़ी विज्ञान (सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक अध्ययन)

अध्येता : डा. नरेश कुमार शर्मा

निर्देशक : प्रो. सेवकराम विरक्त

सह–निर्देशक : वैद्य बनवारी लाल गौड़

1987 : 164

नाड़ी ज्ञान द्वारा रोग निदान की प्रक्रियायें सरल की जा सकती है तथा नाड़ी द्वारा दोष, दूष्य, पाञ्चभौतिक स्थिति, उद्भव, अधिष्ठान आदि का प्रायोगिक अनुभव भी किया जा सकता है। इस अध्ययन हेतु ही यह विषय लिया गया है।

अध्ययन हेतु स्वस्थ सामान्य व्यक्तियों की नाड़ी परीक्षा एवं तमक श्वास के रोगियों में नाड़ी परीक्षा कर तुलनात्मक अध्ययन किया गया। 50 स्वस्थ व्यक्तियों में प्रायोगिक दृष्ट्या दोष की स्थिति देखी गई जो बहिः प्रकोष्ठिका धमनी पर नाड़ी की गति, स्वरूप एवं दर ज्ञात की गई। 32 रोगी तमक श्वास के आधार पर लिए गए।

स्वस्थ व्यक्तियों के नाड़ी परीक्षण में दोषों की गति सामान्य लक्षणों के आधार पर दोषानुसार एवं गणनात्मक दृष्ट्या पुष्ट होती है। किन्तु तमक श्वास के परिप्रेक्ष्य में रोग निदान का इतिवृत्त जानना आवश्यक प्रतीत होता है व कफवातात्मक नाड़ी 25 प्रतिशत में परिलक्षित होती है।

मौलिक सिद्धान्त – 13

अरिष्ट विज्ञानीयम् (ग्रहणी रोग के परिप्रेक्ष्य में)

अध्येता : डा. संतोष शर्मा

निर्देशक : प्रो. मदनगोपाल शर्मा

1988 : 254

विभिन्न रोगों में आप्तोपदिष्ट अरिष्ट लक्षणों का सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक अध्ययन ही उद्देश्य है।

प्रयोग परीक्षण आतुर प्राचुर्य न होने के कारण नहीं किया गया किन्तु शास्त्रोपदिष्ट रोगज, धातुज, दोषज, मलज, स्वर, वर्ण, गंध, दूत, शकुन, स्वप्न, आहारज व आवस्थिक अरिष्ट लक्षणों का पुरुष आश्रित एवं अनाश्रित भेद से संहिता ग्रन्थ एवं टीका ग्रन्थों से अद्यतन संकलन किया गया है।

अरिष्ट निवृत्ति हेतु दैवव्यपाश्रय, युक्तिव्यपाश्रय तथा इस चिकित्सा का संकलन भी किया गया है।

मौलिक सिद्धान्त – 14

''रोगाः सर्वेऽपि मन्देऽग्नौ'' उदर रोग के परिप्रेक्ष्य में अग्निवृद्धिकर भावों का तुलनात्मक अध्ययन

अध्येता : डा. केदार लाल मीणा

निर्देशक : प्रो. मदनगोपाल शर्मा

1988 : 177

व्याधिमूलक मन्दाग्नि का सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक अध्ययन ही उद्देश्य है।

उदररोग लक्षण इतिवृत्त के आधार पर 30 रुग्णों (प्लीहोदर) का चयन कर दो वर्ग बनाए। प्रथम वर्ग में चित्रकपिप्पली घृत (बंङ्गसेन) 15 रुग्णों को एक तोला

मात्रा में सुबह–शाम दुग्ध से दिया। 15 रुग्ण दूसरे वर्ग में थे जिन्हें प्लीहोदरान्तक चूर्ण 3–3 माशा दिन में 3 बार जल से दिया।

चित्रक पिप्पली घृत के आतुरों में अविपाक, अरोचक, अग्निमांद्य, शूल आदि में 80 प्रतिशत लाभ हुआ। किन्तु प्लीहोदरान्तक चूर्ण से प्लीहाभिवृद्धि में 50 प्रतिशत लाभ हुआ।

मौलिक सिद्धान्त – 15

संतर्पणोत्थ व्याधियों में अपतर्पण का सैद्धान्तिक विवेचन

अध्येता : डा. रूक्मिणी गुप्ता

निर्देशक : प्रो. मदनगोपाल शर्मा

1988 : 176

संतर्पण एवं अपतर्पण का सामान्य विशेष सिद्धान्त के परिप्रेक्ष्य में स्थौल्य का प्रायोगिक अध्ययन ही उद्देश्य है।

सौकुमार्य, शैथिल्य, क्षुद्रश्वास, क्षुधा, निद्रा व स्वेदाधिक्य तथा स्तन, उदर, नितम्ब के नाप तथा भार अंकन के आधार पर स्थौल्य के 20 रुग्णों का चयन किया गया, जिन्हें लेखनीय महाकषाय (चरक) 20–20 ml तैयार क्वाथ सुबह, शाम दिया गया । चिकित्सावधि 2 सप्ताह से 5 सप्ताह रही तथा भोजन में दलिया व **पञ्चकोल** चूर्ण 5 ग्राम मात्र दिया गया।

लेखनीय महाकषाय से शरीर आयाम, शरीर भार व शरीर सौष्ठव की दृष्टि से 40 प्रतिशत लाभ परिलक्षित हुआ।

मौलिक सिद्धान्त – 16

आमो विषमचिकित्स्यानाम्

अध्येता : डा. रतन कुमार पारीक

निर्देशक : वैद्य बनवारी लाल गौड़

1989 : 187

आम और तज्जन्य रोगों की चिकित्सा विषमता का प्रायोगिक अध्ययन ही महानिबन्ध का उद्देश्य है।

आम लक्षणों वाली आमवात व्याधि के इतिवृत्तात्मक आधार पर 50 आतुर चयनित करके रसोनादि क्वाथ (भैषज्य रत्नावली) 50–50 मि.लि. प्रातः सायं 28 दिन तक प्रयुक्त किया गया।

लाभालाभ की निर्दिष्ट सारणी के अनुसार आमवात लक्षण एवं अन्य आमज लक्षणों में 76 से 100 प्रतिशत उत्तम लाभ हुआ।

मौलिक सिद्धान्त – 17

''क्षीणेषु दोषेष्वनिलात्मकः स्यात्'' के सन्दर्भ में प्रमेह रोग में ''संवृंहणं तत्र कृशस्य कार्यम्'' का सैद्धान्तिक एवं प्रायोगिक अध्ययन

अध्येता : डा. मनोज कुमार शर्मा

निर्देशक : वैद्य बनवारी लाल गौड़

सह निर्देशक : वैद्य ओम् प्रकाश उपाध्याय

1990 : 186

वातोल्वण प्रमेह रोग में संतर्पण की कार्मुकता का ''क्षीणेषु दोषेष्वनिलात्मकः स्यात् संवृंहणं तत्र कृशस्य कार्यम्'' के परिप्रेक्ष्य में प्रायोगिक अध्ययन ही महानिबन्ध का उद्देश्य है।

आतुरवृत्त पत्रक तथा मूत्र की आयुर्वेदीय और आधुनिक परीक्षाओं के आधार पर 17 वातिक प्रमेही (मधुमेही) रोगियों का चयन कर उन्हें त्रिफला क्वाथ मिश्रित यव सक्तुक की रोटी तथा मधु व सीधु मिलाकर 30 दिन प्रयोग कराया है।

यव सक्तुक यद्यपि अपतर्पक माना गया है। औसत लाभ 40.27 प्रतिशत रहा जो मल प्रवृत्ति, मूत्र विकृति तथा इतिवृत्तात्मक लक्षणों के आधार पर ज्ञात किया गया।

मौलिक सिद्धान्त – 18

उपप्लुता योनिव्यापद् में पलाशादि कल्क प्रयोग द्वारा ''सपिच्छिला परिक्लिन्ना स्तम्भनः कल्क इष्यते'' सिद्धान्त की पुष्टि

अध्येता : डा. सीमा जैन

निर्देशक : वैद्य बनवारी लाल गौड़

सह निर्देशक वैद्य ओम् प्रकाश उपाध्याय

1990 : 155

उपप्लुता योनि व्यापद् में से श्वेत प्रदर पर स्तम्भन कल्क के प्रायोगिक अध्ययन से मौलिक सिद्धान्त की पुष्टि ही अध्ययन का हेतु है।

आतुर पत्रक तथा योनिस्त्राव की भौतिक परीक्षा द्वारा श्वेत प्रदर की 40 रुग्णाओं का चयन कर पलाशादि कल्क (चरक संहिता) की वर्ति बनाकर योनिपिचु के रूप में प्रयुक्त की गयी।

कुल 18 लक्षणों में से 22.23 प्रतिशत रोगियों को पूर्ण लक्षण शमन हुआ। 27.78 प्रतिशत रोगियों में 5 लक्षण उपशमन हुआ, 38.88 प्रतिशत रोगियों में 7 लक्षणों में उपशमन हुआ।